इकाई 1 सामाजिक अध्ययन के अध्यापन का स्वरूप, उसके उद्देश्य और विविध उपागम

संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 सामाजिक अध्ययन की संकल्पना - कुछ बुनियादी विचार

1.3.1 सामाजिक अध्ययन और अन्य अध्ययन क्षेत्रों के बीच संबंध

1.3.2 एक विषय के रूप में सामाजिक अध्ययन के बारे में वर्तमान प्रत्यक्ष-यथार्थता दक्षता और प्रत्याशाएँ

1.4 माध्यमिक विद्यालयी पाठ्यचर्या में सामाजिक अध्ययन का स्थान

1.4.1 सामाजिक अध्ययन में अधिगम-निष्पत्तियां

1.4.2 सामाजिक अध्ययन के अध्यापन के लिए आवश्यक दृष्टिकोण और दक्षता विकास में अध्यापक की भूमिका

1.5 हम सामाजिक अध्ययन को एक संपूर्ण विषय के रूप में क्यों पढ़ाएँ?

1.5.1 नीतिगत ढाँचा

1.5.2 सामाजिक अध्ययन के अध्यापन से संबंधित उभरते उद्देश्य

1.6 सामाजिक अध्ययन पाठ्यचर्या को व्यवस्थित करने संबंधी विभिन्न उपागम

1.6.1 एकीकृत/ समाकलित उपागम

1.6.2 अंतःशास्त्रीय/ सहसंबंधित उपागम

1.6.3 इकाई उपागम

1.7 वैकल्पिक उपागमों को प्रभावित करने वाले कारक

1.7.1 लचीलापन

1.7.2 संसाधनों की उपलब्धता

1.7.3 सामुदायिक संसाधनों का उपयोग

1.7.4 निजी अनुभवों का उपयोग

1.7.5 विद्यार्थियों के अभिलक्षण

1.8 सारांश

1.9 अभ्यास कार्य

1.10 चर्चा के बिंदु

1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

"सामाजिक अध्ययन" शब्द का प्रयोग पिछले कुछ वर्षों से ही हो रहा है। इस तरह से विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में यह संकल्पना नई-नई उभर कर सामने आई है। चूँकि अब इसका समावेश

विद्यालयी पाठ्यचर्या में हो गया है इसलिए यह आवश्यक था कि मनुष्य-जाति के बारे में अध्ययन करने के उपागमों में भी कुछ परिवर्तन किया जाए। इस प्रकार का अध्ययन अब मनुष्य के ऐतिहासिक, भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पर्यावरणों को ध्यान में रखकर किया जाने लगा है। भारत संघ के अधिकतर राज्यों ने सामाजिक अध्ययन को अपने-अपने विद्यालयी पाठ्यचर्या में सम्मिलित कर लिया है। फिर भी अब तक यह संकल्पना मानकीकृत नहीं हो पाई है। अलग-अलग राज्यों ने इसे अलग-अलग रूप में अंगीकृत कर रखा है। यही नहीं, अध्यापकों के अलग-अलग वर्ग इस विषय के विविध घटकों का अध्यापन अलग-अलग ढंग से करते देखे गए हैं। अतः यह आवश्यक हो गया है कि अध्यापकों के बीच इस प्रकार की जागरूकता पैदा की जाए, जिसके फलस्वरूप वे सामाजिक अध्ययन को एक स्वतःपूर्ण अधिगम का विषय समझने लगें। जब तक ऐसा नहीं होगा तब तक एक स्वतंत्र और स्वतःपूर्ण विषय के रूप में सामाजिक अध्ययन को पढ़ाने के उद्देश्यों की पूर्ति संभव नहीं होगी। नीतिगत व्यवस्था अर्थात् मूल पाठ्यचर्या (एन पी ई 1986) के अनुसार सामाजिक अध्ययन को एक स्वतंत्र विषय के रूप में पढ़ाने से मानवतावाद, पंथनिरपेक्षता (या कहें धर्म-निरपेक्षता), समाजवाद और लोकतंत्र के मूल्यों और विचारों की प्रसार-वृद्धि होगी। मूल पाठ्यचर्या में सामाजिक अध्ययन के सम्मिलित कर लिए जाने से यह अपेक्षा दृढ़ हुई कि ज्ञानवृद्धि और कौशलों के विकास के साथ-साथ इससे स्वस्थ नागरिकों के निर्माण के लिए आवश्यक अभिवृत्तियों को सिखाने और दिल में बिठाने में मदद मिलेगी। इसके लिए यह ज़रूरी था कि पाठ्यचर्या को इस तरह से पुनर्व्यवस्थित किया जाए कि विभिन्न विषयों की सीमा-रेखाओं का भेद मिट जाए और ये विषय कोष्ठीकृत रूप में ज्ञान का विसरण करते प्रतीत न हों। मतलब यह कि इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र, अर्थशास्त्र, समाजविज्ञान आदि विषयों की अलग-अलग विधियाँ न रहें और उनका समेकन एक ही विषय के अंतर्गत हो जाए। ऐसा करने से अलग-अलग सामाजिक विज्ञानों को मिलाकर सामाजिक अध्ययन के रूप में एकीकृत करने का मार्ग प्रशस्त होगा और इस तरह से एक समग्र और स्वतःपूर्ण या कहें समेकित पाठ्यचर्या विकसित हो जाएगी।

इस इकाई में हम सबसे पहले "सामाजिक अध्ययन" शब्द का अर्थ और उसकी संकल्पना की जानकारी प्राप्त करेंगे। साथ ही इसके अध्ययन की वर्तमान स्थिति का बारीकी से विश्लेषण करेंगे तथा यह भी बताएँगे कि पुनर्व्यवस्थित पाठ्यचर्या के अनुसार पढ़ाते समय अध्यापकों की जिम्मेदारी कितनी बढ़ गई है और इसे पूरा करने के लिए उन्हें अपने दृष्टिकोण और क्षमताओं में किस तरह से विकास करना चाहिए। यह इकाई एक तरह से आगामी इकाइयों के लिए भूमिका का कार्य भी करेगी।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर लेने के बाद आप :

- 'सामाजिक अध्ययन' शब्द का अर्थ बता सकेंगे;
- माध्यमिक विद्यालयों में सामाजिक अध्ययन नामक विषय की वर्तमान स्थिति का वर्णन कर सकेंगे;
- सामाजिक अध्ययन के अधिगम के महत्व का वर्णन कर सकेंगे;
- सामाजिक अध्ययन के अध्यापन के सामान्य लक्ष्यों को समझा सकेंगे;
- विद्यालयों में सामाजिक अध्ययन को पढ़ने वाले छात्रों की आवश्यकता और उसके संभावित परिणाम को ध्यान में रखते हुए एक समेकित विषय के रूप में पढ़ाने के उद्देश्यों को स्पष्ट कर सकेंगे;
- सामाजिक अध्ययन की विषयवस्तु के व्यवस्थापन के लिए प्रचलित वैकल्पिक तरीकों की पहचान कर सकेंगे; तथा

- निर्धारित पाठ्य-विवरण के अनुसार विषयवस्तु के व्यवस्थापन के उदाहरण दे सकेंगे।

1.3 सामाजिक अध्ययन की संकल्पना - कुछ बुनियादी विचार

विद्यालय एक सामाजिक संस्था है। इसमें विविध प्रकार के कई विषयों की शिक्षा दी जाती है। शिक्षा का क्रम जीवनभर चलता रहता है। सभी प्रकार की शैक्षिक क्रियाओं, प्रक्रमों, कार्यक्रमों या उत्पादों का केंद्र मनुष्य ही है।

हम सभी जानते हैं कि भाषा अधिगम, कलाएँ, गणित और प्राकृतिक विज्ञान जैसे सभी विषय किसी-न-किसी अर्थ में विचारों, कौशलों और उत्पादों के रूप में मानवीय अनुभवों के परिचायक हैं, फिर भी सामाजिक अध्ययन ही वह विशेष विषय है जिसकी विषयवस्तु के केंद्र में प्रमुख रूप से मुनष्य रहता है। एक क्षण के लिए, मान लीजिए, आप स्वयं अध्ययन का विषय हैं। तब अपने बारे में सार्थक जानकारी संकलित करने के लिए आपको यह खोजना होगा कि आपका अतीत कैसे बीता (अर्थात् इतिहास), आप किस प्रकार के पर्यावरण में अपना जीवन जी रहे हैं (अर्थात् भूगोल), आपकी आवश्यकताएँ और आकांक्षाएँ क्या थीं और क्या हैं (अर्थात् मनोविज्ञान), आप जिस समाज में जीवनयापन कर रहे हैं उसमें आपका क्या स्थान है (अर्थात् समाजविज्ञान), आपकी वित्तीय स्थिति कैसी है (अर्थात् अर्थशास्त्र), आप दूसरों को और दूसरे आपको किस तरह से प्रभावित कर रहे हैं (अर्थात् राजनीति विज्ञान), आपकी संस्कृति ने आपको किस रूप में प्रभावित किया है (अर्थात् नृविज्ञान या मानवशास्त्र) आदि-आदि।

इस तरह से सामाजिक अध्ययन के माध्यम से उसके अध्येता को यह पता चल जाता है कि देश-काल और समाज के संदर्भ में उसका स्थान कहाँ है। इसीलिए सामाजिक अध्ययन की जो अनेक परिभाषाएँ आपने पढ़ी होंगी और उसके स्वरूप को स्पष्ट करने के बारे में आपने जो कई प्रकार के विचार जाने होंगे, उनके एक छोर पर है मनुष्यों के बारे में वह अध्ययन जिसमें इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र आदि-आदि को अलग-अलग विषय माना जाता रहा है और दूसरे छोर पर है इन सबका समाकलित रूप में अध्ययन। इस प्रकार के अध्ययन में इन विभिन्न विषयों को अलग-अलग करके नहीं देखा जाता अर्थात् उनके बीच का अंतर तिरोहित हो जाता है।

> **क्रियाकलाप**
>
> सामाजिक अध्ययन शब्द का क्या अर्थ है?

आप सामाजिक अध्ययन की परिभाषा के लिए निम्नलिखित वाक्यों में से किसी भी वाक्य को चुन सकते हैं।

1. लोगों और उनके पर्यावरण का अध्ययन सामाजिक अध्ययन कहलाता है।
2. स्थानीय, राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर लोगों के मिल-बैठकर जीवनयापन करने और साथ-साथ काम करने का अध्ययन सामाजिक अध्ययन कहलाता है।
3. आज समस्त विश्व में लोग आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से किस तरह और क्यों एक दूसरे पर निर्भर हैं, इसकी जानकारी प्राप्त करना और उनकी अन्योन्याश्रितता को महसूस करना ही सामाजिक अध्ययन है।
4. मनुष्य द्वारा अपने अतीत की जानकारी में वृद्धि करना तथा अपनी समसामयिक प्रवृत्तियों की व्याख्या करना और समाज का प्रभावी सदस्य बनने के लिए अपने कौशलों का विकास करने का अध्ययन ही सामाजिक अध्ययन है।

जी हाँ, आप सही रास्ते पर हैं। आइए, अब हम सामाजिक अध्ययन और अन्य अध्ययन-क्षेत्रों के बीच जो संबंध है, उस पर विचार करें।

1.3.1 सामाजिक अध्ययन और अन्य अध्ययन क्षेत्रों के बीच संबंध

सामाजिक अध्ययन का विषय/ क्षेत्र अन्य अधिगम क्षेत्रों से इस दृष्टि से भिन्न है कि इसकी विषयवस्तु और इसका प्रयोजन-दोनों में ही मनुष्यों और उनके भिन्न-भिन्न प्रकार के संबंधों पर विशेष बल रहता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, अन्य सभी अध्ययन-क्षेत्रों का भी सामाजिक प्रयोजन होता है और सामाजिक उपयोगिता भी। चूँकि ये दोनों ही मनुष्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले हैं, अतः इन्हें पाठ्यचर्या में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। यद्यपि अंकगणित की सामाजिक उपयोगिता है और वह मानवीय संबंधों में भी वृद्धि करता है किंतु उसकी विषयवस्तु में मनुष्य और उनके संबंध सम्मिलित नहीं हैं।

विज्ञान के विषय भौतिक पदार्थ हैं, भाषा विचारों का संप्रेषण है और गणित का सरोकार मात्रा से होता है, जबकि सामाजिक अध्ययन में मुख्य रूप से मानवीय संबंधों पर विचार किया जाता है। इस विषय में सदा संबंधों पर ही ज़ोर रहता है, न कि व्यक्तियों पर; सामाजिक कार्यकलाप पर ही बल दिया जाता है, न कि व्यक्तिगत कार्यों के लेखे-जोखे पर। यही माना जाता है कि समाज से व्यक्तियों की पहचान होती है, अर्थात् समाज ही मनुष्यों को बनाता है। समाज को केवल मनुष्यों का संग्रह मानना उचित नहीं होगा। आमतौर पर सामाजिक अध्ययन के तीन प्रयोजन गिनाए जाते हैं। ये हैं : व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति करना, लोगों को शैक्षिक, सामाजिक और वैज्ञानिक ज्ञान अर्जित कराने की व्यवस्था करना तथा समाजीय आवश्यकताओं के अनुरूप नागरिकों को शिक्षा देना। इसके अध्ययन से यह बात साफ हो जाती है कि कोई भी व्यक्ति केवल अपने लिए नहीं जीता। वास्तव में देखा जाए तो सामाजिक अध्ययन समस्त समाज के लोगों के जीवन का अध्ययन है - उस समाज का जिसका हर व्यक्ति एक अंग होता है और इन सारे अंगों को एक-दूसरे पर निर्भर रहना पड़ता है।

1.3.2 एक विषय के रूप में सामाजिक अध्ययन के बारे में वर्तमान प्रत्यक्ष - यथार्थता और प्रत्याशाएँ

भारत के लगभग सभी राज्यों में सामाजिक अध्ययन को मूल पाठ्यचर्या का एक अंग तो बना दिया गया है, फिर भी देखा यह गया है कि कई जगह अब भी विषयवस्तु का निर्धारण करते समय इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विषयों को प्राचीन अनुक्रम में ही रखा जा रहा है। कई अध्यापक आज भी सामाजिक अध्ययन के नाम पर सामाजिक विज्ञानों के विषयों को अलग-अलग पढ़ाते देखे जा सकते हैं। यूँ तो सैद्धांतिक रूप से कई आयोग, समितियाँ और शिक्षा नीतियाँ बार-बार सामाजिक अध्ययन का प्रयोजन स्पष्ट कर चुके हैं फिर भी कुछ नवीन पद्धति अपना लेने वाले विद्यालयों को छोड़कर अधिकतर विद्यालयों में खंड-खंड करके पढ़ाई जाने वाली वही प्राचीन पद्धति की लीक पर चला जा रहा है। अतः यह बहुत ही आवश्यक है कि भावी अध्यापकों में और साथ ही साथ सामाजिक विज्ञानों के विषयों को अलग-अलग करके पढ़ाने वाले वर्तमान अध्यापकों में ऐसी जागरूकता पैदा की जाए ताकि वे सामाजिक अध्ययन को विद्यालयी पाठ्यचर्या का एक समेकित और महत्वपूर्ण अंग मानकर उसका अध्यापन करें।

क्रियाकलाप

आरेख (क)

इतिहास + भूगोल + नागरिकशास्त्र + समाजशास्त्र + अर्थशास्त्र

आरेख (ख)

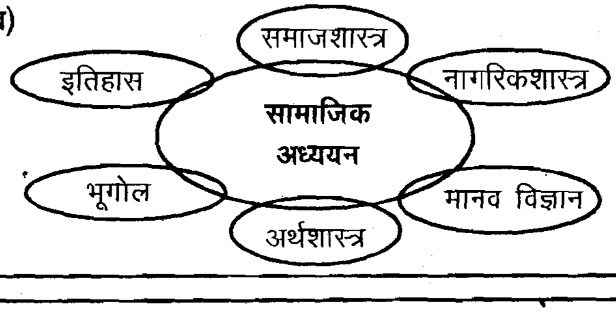

आरेख (क) और (ख) को देखकर बताएँ कि कौन-सा आरेख आज की वास्तविकता का सूचक है और कौन-सा आरेख भावी अपेक्षा दर्शाता है?

क .... या ख ....:.................................

- यह जानने के लिए कि आप सही आरेख का चयन कर रहे हैं या नहीं, आप निम्नलिखित नीतिगत सूत्र-वाक्यों पर ध्यान दें :

i) सामाजिक अध्ययन को एक सुसंगठित संपूर्ण विषय माना जाए।

ii) सामाजिक अध्ययन को कई सामाजिक विज्ञान विषयों का केवल संग्रह मात्र, या कहें कुल योग, मानना ठीक नहीं होगा।

आइए, माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) की रिपोर्ट के उद्धरण से इस बात को अधिक स्पष्ट करते हैं :

"लोगों को प्रायः यह बात समझ में नहीं आती कि ढेर सारे ज्ञान की जो शिकायत अक्सर की जाती है उसका सबसे बड़ा कारण विषयों की बहुलता के कारण है। इन सारे विषयों को अलग-अलग माना जाता है; यह नहीं समझा जाता कि इनमें से कई विषय परस्पर जुड़े हुए हैं अर्थात् उनमें कायिक एकता है। इसलिए पाठ्यचर्या तैयार करते समय यह देखने का प्रयास किया जाए कि क्या कुछ ऐसे विषयों को एक बड़ी सुसंगठित इकाई में एकीकृत किया जा सकता है जो मानवीय ज्ञान और रुचि के मोटे दायरे में आते हैं। अतः मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अधिक अच्छा तो यह होगा कि सामाजिक पर्यावरण और मानवीय संबंधों के अध्ययन से जुड़े हुए सभी विषयों को, जैसे कि इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र आदि को एक-दूसरे से बिल्कुल अलग विषयों के रूप में पढ़ाया न जाकर 'सामाजिक अध्ययन' जैसे व्यापक शीर्षक के अंतर्गत समेकित रूप में प्रस्तुत किया जाए।"

विद्यालयी पाठ्यचर्या में सामाजिक अध्ययन विषय की वर्तमान स्थिति क्या है? आइए, अब हम इस प्रश्न का उत्तर खोजने का प्रयत्न करें।

बोध प्रश्न

टिप्पणियाँ: (क) नीचे के रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1. एक अध्ययन-क्षेत्र के रूप में सामाजिक अध्ययन की विषय-वस्तु क्या है?

....

....

....

....

2. सामाजिक अध्ययन के तीन मुख्य प्रयोजन कौन-कौन से हैं?

....

....

....

....

1.4 माध्यमिक विद्यालयी पाठ्यचर्या में सामाजिक अध्ययन का स्थान

पाठ्यचर्या शैक्षिक प्रक्रम की धुरी है। सामाजिक अध्ययन के नाम से जाना जाने वाला विषय विद्यालयी पाठ्यचर्या का वह हिस्सा है जिसमें ऐसी विषयवस्तु और वे क्रिया-कलाप सम्मिलित होते हैं जो बच्चों में मानवीय संबंधों की समझ पैदा करते हैं, उन्हें अपने आसपास के पर्यावरण की जानकारी देते हैं, समाज के सिद्धांतों और मूल्यों के प्रति समर्पण की भावना भरते हैं तथा उनके मन में ऐसी निष्ठा जगाते हैं जो समाज को चलाने में, आगे बढ़ाने में और उसमें सुधार करते रहने में उनकी मदद करे। इस तरह से सामाजिक अध्ययन विद्यालयी पाठ्यचर्या का वह प्रमुख अंग है जिसका मुख्य प्रयोजन बच्चे को 'पहले अच्छा इन्सान' और बाद में अच्छा कलाकार, अच्छा डॉक्टर, अच्छा वैज्ञानिक, अच्छा अध्यापक, अच्छा इंजीनियर या अच्छा वकील आदि बनाना होता है।

मूल पाठ्यचर्या के रूप में सामाजिक अध्ययन का लक्ष्य है - विद्यार्थी को न केवल अपने पर्यावरण के अनुकूल ढलने में मदद करना अपितु सक्रिय समूह-सदस्य बनकर अपने सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और भौतिक पर्यावरण में निरंतर सुधार करते रहने वाला व्यक्ति बनाना। सामाजिक अध्ययन की परंपरागत पाठ्यचर्या की आलोचना का मुख्य कारण यह था कि पहले इस पाठ्यचर्या को कई विषयों का समूह मात्र माना जाता रहा था, जबकि आज वाले सामाजिक अध्ययन में छात्र को अपने पर्यावरण में जीवन बसर करते हुए ही पठन, लेखन, प्रेक्षण, चर्चा-परिचर्चा, रचना, अभ्यास, खेल-कूद, समस्या-समाधान, संबंध-प्रदर्शन और संबंधों के विकास के माध्यम से ज्ञानवृद्धि, कौशल-अर्जन, अभिवृत्ति-निर्माण और मूल्य-रक्षा संबंधी बातें सिखाई जाती है।

सामाजिक अध्ययन पाठ्यचर्या की कुछ सीमाएँ/कमियाँ

i) सामाजिक अध्ययन पाठ्यक्रम को सामान्य रूप से सूचनाओं का संग्रह/निकाय मात्र समझा जाता है। इसके अध्ययन-अध्यापन में प्रायः आलोचनात्मक और व्याख्यात्मक चिंतन की अपेक्षा तथ्यों को याद कर लेने भर पर ज़ोर दिया जाता रहा है।

ii) प्रायः देखा यह गया है कि मूल्यों के स्पष्टीकरण या कहें मूल्यों को जानने-समझने और मूल्य-मतारोपण के बीच का सूक्ष्म अंतर स्पष्ट नहीं किया जाता। होना यह चाहिए कि बच्चों को वस्तुनिष्ठ आधार-सामग्री, आँकड़े संग्रह करने, घटनाओं और तथ्यों का विश्लेषण और व्याख्या करने तथा उन घटनाओं और तथ्यों के बारे में आत्मचिंतन द्वारा मूल्य-निर्णय करने के बीच जो स्पष्ट भेद है, उसे सिखाया जाए।

iii) बच्चों की अधिगम संभाविता या कहें उनके अधिगम सामर्थ्य के बारे में हमने यह मिथ्या धारणा पाल रखी है कि वे उपर्युक्त अंतर करने में सफल नहीं होंगे। हम पहले से ही उनके सामर्थ्य को बहुत कम आँक कर चलते हैं।

iv) सामाजिक अध्ययन की पूर्व प्रचलित पाठ्यचर्या में मनुष्यों और उनके पर्यावरण से जुड़ी हुई विद्या-शाखाओं का यथेष्ट प्रतिनिधित्व नहीं होता था। मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, मानवविज्ञान और अर्थशास्त्र जैसे विषयों की प्रायः अवहेलना की जाती रही है, जबकि इतिहास, भूगोल और राजनीतिविज्ञान के कुछ पक्षों पर ही इस पाठ्यचर्या में बल दिया जाता रहा है।

शिक्षा के तीन मुख्य उपागम हैं : छात्र-केंद्रित, समाज-केंद्रीत और विषय-केंद्रित। आधुनिक पाठ्यचर्या नियोजक विद्वान अब इन सबके बारे में समग्रतापरक दृष्टिकोण अपनाने पर जोर देते हुए कहने लगे हैं कि हमें बच्चों की आवश्यकताओं, समाज की आवश्यकताओं और ज्ञान-संरचना सबों सामंजस्य स्थापित करते हुए उन पर एकीकृत रूप से ध्यान देना चाहिए। जिन तीन प्रयोजनों की प्रायः चर्चा की जाती है, वे केवल व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक होते हैं अर्थात् जब कोई व्यक्ति किसी विषय-विशेष का सैद्धांतिक, सामाजिक और वैज्ञानिक

ज्ञान अर्जित करना चाहे या उसे समाजीय आवश्यकताओं की पूर्ति के संदर्भ में नागरिकता की शिक्षा देना वांछित हो, तब इनका अलग-अलग प्रयोजन सार्थक माना जाता है। किंतु सामाजिक अध्ययन के प्रसंग में अब इन तीनों प्रयोजनों को अलग-अलग गिनाने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। इन तीनों को अलग-अलग गिनाने के स्थान पर इनके बीच उपयुक्त समन्वय स्थापित कर इनका संतुलित रूप प्रस्तुत किया जाना चाहिए। सामाजिक अध्ययन की अच्छी पाठ्यचर्या वही मानी जाएगी जो नवयुवकों को जिम्मेदार नागरिक बनने में मदद करे ताकि वे सामाजिक विज्ञानों और अन्य विद्याशाखाओं से चुनी गई उपयुक्त ज्ञानराशि और उस पर आधारित अनुभवों के माध्यम से अपने समाज से जुड़ सकें। अतः सामाजिक अध्ययन की पाठ्यचर्या की योजना तैयार करने का काम मूलतः उपर्युक्त सामान्य लक्ष्य की प्राप्ति के लिए समुचित विषयवस्तु का चयन और व्यवस्थापन ही है। फिर भी, पाठ्यचर्या का वास्तविक आरूप देश-काल के अनुसार अलग-अलग होगा अर्थात् अलग-अलग काल-खंडों के अनुसार उसका स्वरूप यदि भिन्न हो और एक देश की तुलना में दूसरे देश की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए यदि उनके लिए तैयार पाठ्यचर्या में भिन्नता नज़र आए तो आपत्ति नहीं होनी चाहिए। इस भिन्नता का मुख्य कारण वैयक्तिक आवश्यकताएँ भी हो सकती हैं और समाजीय आवश्यकताएँ भी, क्योंकि देखा यह गया है कि प्रायः इन दोनों प्रकार की आवश्यकताओं में अंतर होता है। कारण यह भी है कि लोगों का सोचने का तरीका अलग-अलग होता है जो किसी-न-किसी रूप में उनके शैक्षिक ज्ञान से नियंत्रित होता है।

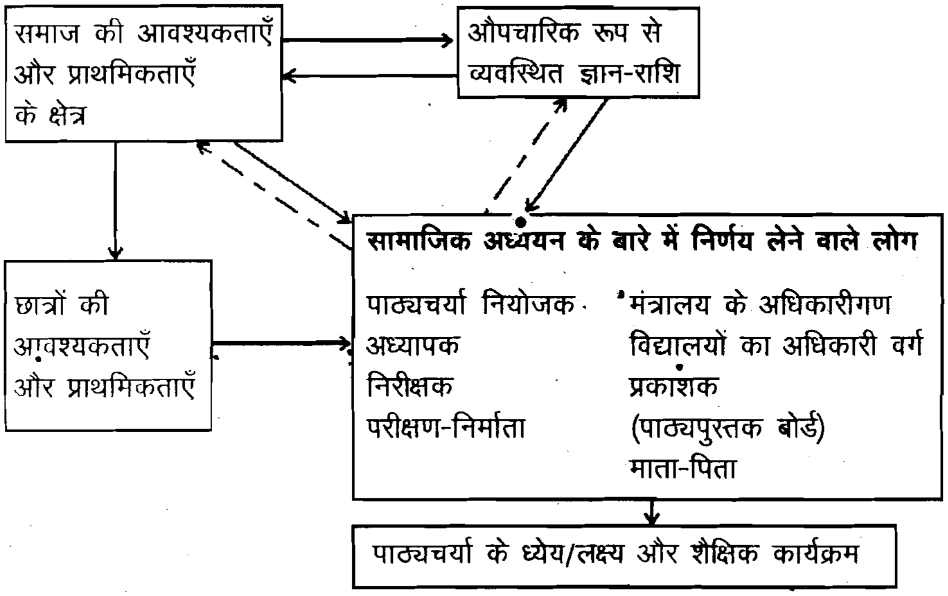

— प्रत्यक्ष प्रभाव

... संभावित प्रभाव

रेखाचित्र 1.1 : **सामाजिक अध्ययन पाठ्यचर्या के बारे में निर्णयन को प्रभावित करने वाले कारक**

सौजन्य : मेहलिंजर (संस्करण) 1981

उपागम किसका? उपागम किसका नहीं? इस प्रकार का चयन कौन करता है? दूसरे शब्दों में क्या सीखा जाए और क्या नहीं? तथा इसके बारे में निर्णय किसका चलता है? इन प्रश्नों के उत्तर अलग-अलग समाजों (राज्यों) के लिए अलग-अलग होंगे। देखा यह गया है कि कुछ राज्यों में पाठ्यचर्या निर्धारण की निर्णायक शक्ति वहाँ किसी केंद्रीय अभिकरण में निहित होती है तो अन्य राज्यों में निर्णय करने का काम कई वर्ग मिलकर पूरा करते हैं। ये विभिन्न वर्ग हैं : पाठ्यचर्या-नियोजक, अध्यापक, विद्यालयों के अधिकारी, पाठ्यपुस्तक बोर्ड आदि। यहाँ तक कि ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं जहाँ माता-पिता और मंत्रालय का अधिकारी वर्ग तक पाठ्यचर्या-निर्धारण के बारे में निर्णय करते देखे गए हैं। निर्णय कोई भी करता हो या दूसरों द्वारा किए गए निर्णय को प्रभावित करने की शक्ति किसी के हाथ में रहे - आवश्यक यह है कि सभी तर्कबुद्धि

संम्मत नियोजन के प्रक्रम का अनुपालन करने वाले हों। अलग-अलग राज्यों में या अलग-अलग समाजों में या निर्णायकों तक में अंतर पाया जाता हो अर्थात् परिस्थितियाँ कैसी भी हों - सभी अवस्थाओं में उपर्युक्त रेखाचित्र सही स्थिति दर्शाता है।

सारे देश में अनुपालन के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन सी ई आर टी) द्वारा निर्मित और संस्तुत सामाजिक अध्ययन की आदर्श राष्ट्रीय पाठ्यचर्या (1989) को यदि आप ध्यान से देखें तो पाएँगे कि उसमें जो पाठ्यविवरण निर्धारित है वह एकीकृत नहीं लगता। उसमें इतिहास, भूगोल और नागरिकशास्त्र जैसे विषयों को स्वतंत्र इकाइयों में बाँटकर रखा हुआ है। यहाँ तक कि इन विषयों को पढ़ाने के उद्देश्य, उनके पाठ्यविवरण और प्रायोगिक अभ्यास/ परियोजना कार्य भी अलग-अलग दिए गए हैं।

उपर्युक्त आदर्श पाठ्यचर्या में जिन मूल्यांकन कार्यविधियों के अनुगमन की बात की गई है उनमें सामान्य रूप से लक्ष्य तो बनाया गया है - कागज़/ पैंसिल परीक्षण को, किंतु जिस प्रकार से परीक्षाएँ ली जाती हैं उसका तनाव छात्रों पर इतना अधिक पड़ता है कि उनकी इनमें अरुचि पैदा हो जाती है। बच्चा प्रतिदिन प्रगति के पथ पर बढ़ता रहे - इसके बारे में कुछ भी प्रयत्न सुझाया गया हो, ऐसा नहीं लगता। यहाँ तक कि संस्तुत मूल्यांकन कार्यविधियों में सामाजिक अध्ययन अधिगम के प्रत्याशित परिणामों के बारे में भी कुछ नहीं कहा गया है।

1.4.1 सामाजिक अध्ययन में अधिगम-निष्पत्तियां

क्रियाकलाप

आपकी दृष्टि में सामाजिक अध्ययन के अध्यापन में अधिगम-परिणाम क्या-क्या हो सकते हैं?

i) ....

ii) ....

iii) ....

iv) ....

बच्चे के समग्र विकास में सामाजिक अध्ययन का महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। संभावित परिणामों को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है :

i) ज्ञान संरचना

ii) सुसंगत समझ

iii) वांछनीय अभिवृत्तियाँ

iv) अनिवार्य कौशल

i) ज्ञान-संरचना

सामाजिक अध्ययन की विषय-वस्तु देश और काल के संदर्भ में मनुष्यों और उनके पर्यावरण से संबंधित तथ्यों और सूचनाओं पर आधारित होती है। इसलिए यह आवश्यक है कि विषय-वस्तु की संरचना इसके सुसंगत अनुक्रम में होनी चाहिए ताकि छात्र के मस्तिष्क में जो नए तथ्य और सूचनाएँ प्रविष्ट हों उनसे उसके ज्ञान-भंडार का सही रूप में विकास होता रहे।

ii) सुसंगत समझ

यदि सामाजिक अध्ययन का अध्यापन परस्पर असंबद्ध और अलग-अलग तथ्यों का छात्र के मस्तिष्क में मात्र संचरण करना नहीं है तो फिर यह अत्यावश्यक है कि उन तथ्यों को एक व्यवस्था-क्रम में नियोजित कर छात्रों के दिमाग में उनसे संबंधित सही-सही समझ पैदा करने का प्रयत्न किया जाए। अध्यापक को चाहिए कि वह इस प्रकार की नई सूचनाओं को उनके सही

परिप्रेक्ष्य में ग्रहण करने और उन्हें ठीक प्रकार से समझने मे छात्रों की मदद करे। कक्षा के अंदर और बाहर - दोनों ही जगह इन तथ्यों और सूचनाओं से जुड़े हुए अनुभव प्राप्त करने और तत्संबंधी क्रियाओं में लगने की प्रेरणा देते हुए अध्यापक छात्रों में इन संकल्पनाओं की समझ बढ़ाने में सहायता कर सकता है।

iii) वांछनीय अभिवृत्तियाँ

अभिवृत्ति क्या है? किसी वस्तु, पदार्थ, घटना, व्यक्ति, वर्ग या किसी भी अन्य विषय के बारे में मनुष्य के मन में अनुभूति पैदा करना अभिवृत्ति कहलाती है। मनुष्य तथ्यों को आसानी से भूलता चला जाता है किंतु उनके बारे में उसके मन में जो अभिवृत्ति बैठ जाती है वह लंबे समय तक जीवित रहती है। हाँ, यह अवश्य देखा गया है कि परिस्थितियों के बदलने के साथ-साथ अभिवृत्तियों में भी बदलाव आ सकता है। इसलिए अध्यापक को चाहिए कि वह विविध क्रियाओं और अभिगम-अनुभवों के माध्यम से छात्रों में वांछित अभिवृत्तियों के विकास में मदद करता जाए। चूँकि अभिवृत्तियाँ अनजाने में निर्मित होती हैं इसलिए अध्यापक को चाहिए कि वह सजग रहते हुए अपने खुद के आदर्श व्यवहार से समुचित अभिवृत्तियों को छात्रों पर प्रकट करता जाए ताकि छात्र भी उन्हें अपने जीवन में उतार सकें।

iv) अनिवार्य कौशल

छात्रों के अधिगम-परिणाम में कौशलों का विकास भी अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। तथ्यों को व्यवस्थित करने तथा उनके बारे में समझ बढ़ाने और अभिवृत्ति निर्मित करने में कौशलों का बड़ा हाथ रहता है। किसी घटना विशेष को देखने-समझने और उसके बारे में व्यक्तिगत रूप से सोचने या सामूहिक रूप से विचार-विमर्श करने के कौशल सबसे अधिक महत्व रखते हैं। इसी तरह से, कोई आकृति बनाने या किसी अमूर्त विचार को मूर्त रूप देने, सुनने आदि जैसे कौशलों का विकास भी अत्यंत वांछनीय है। इनके अतिरिक्त, विभिन्न विद्याशाखाओं तथा निजी विकास और क्षमता-वृद्धि संबंधी कई कौशल और भी हैं।

सर्वेक्षण (1981) में सामाजिक अध्ययन नामक विषय को पढ़ाते समय निम्नलिखित कौशलों के अनिवार्यतः विकसित किए जाने की बात कही गई है :

i) अन्योन्यक्रिया संबंधी कौशल

ii) सूचना-प्राप्ति संबंधी कौशल

iii) सूचना-प्रकमण संबंधी कौशल

iv) सामूहिक सहभागिता/ कार्य-संपादन संबंधी कौशल

कौशलों के वर्गीकरण का एक अन्य सुझाव इस तरह से है :

i) अध्ययन और अधिगम संबंधी कौशल

इसका अभिप्राय यह है कि सूचना को खोजने, उसे समझने, उसे व्यवस्थित करने, उसकी व्याख्या करने और उसका मूलयांकन करने से संबंधित कौशलों का विकास छात्रों में किया जाना चाहिए। ऐसे ही कुछ अन्य कौशल हैं : नक्शों, सारणियों, चार्टों (आरेखों) ग्राफों और काल-रेखाओं का अर्थ समझना, समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं का पढ़ना, तथ्यों और काल्पनिक कथाओं के बीच भेद करना तथा तथ्यों और विचारों को अलग-अलग मानना, सामाजिक अध्ययन से संबंधित तकनीकी शब्दावली का संग्रह करना और उसे स्मरण रखना, संगृहीत सूचना का वर्गीकरण करना, आधार-सामग्री का सारांश तैयार करना, घटनाओं को कालक्रमानुसार व्यवस्थित करना, प्रश्नों और विचारों को इस तरह से प्रस्तुत करना कि उन्हें समझने में दूसरों को कठिनाई न हो। ये सभी ऐसे विशिष्ट प्रकार के कौशल हैं जिनका छात्रों में अनुक्रमित विकास किया जाना वांछनीय है।

ii) जिज्ञासा और निर्णय करने संबंधी कौशल

किसी भी घटना के बारे में जिज्ञासा करने और निर्णय करने से संबंधित कौशलों से छात्रों की सोचने और सीखने की योग्यता में विस्तार होता है। निर्देशित खोज अधिगम द्वारा इन कौशलों की प्राप्ति हो सकती है। निर्देशित खोज अधिगम उस स्थिति में संभव है जब किसी चयनित विशिष्ट उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अध्यापक द्वारा प्रस्तुत समस्या के उत्तर छात्र स्वयं खोजने को तत्पर हों। जिज्ञासा संबंधी कौशलों के अध्यापन की इस कार्य-नीति में निम्नलिखित बातें सम्मिलित हैं :

i) समस्या को पहचानने संबंधी कौशल;

ii) अभिकल्पनाएँ विकसित करने संबंधी कौशल;

iii) अन्वेषण करने संबंधी कौशल;

iv) अभिकल्पनाओं को पुष्ट या प्रमाणित करने वाले साक्ष्य का उपयोग करने से संबंधित कौशल; और

v) निष्कर्ष निकालने से संबंधित कौशल।

छात्रों में इन सभी कौशलों के विकास की वृद्धि हो सके - इसके लिए अध्यापक को चाहिए कि वह जिन प्रश्नों के अचूक या सुनिश्चित उत्तर प्राप्त न हों उनके बारे में जो भी विभिन्न विचार प्रकट किए जाएँ उन सबका स्वयं स्वागत करे तथा अपने विद्यार्थियों को भी ऐसा करना सिखाए। प्रश्न करने और विविध प्रकार के साक्ष्य खोजने की स्वतंत्रता छात्रों को दी जानी चाहिए। आखिरकार, समूहगत निर्णयन कार्य-कलाप के लिए सहनशीलता तथा विभिन्न मत-मतांतरों और निर्णयों की खुली छूट देने से संबंधित कौशलों का विकास करने की आवश्यकता तो है ही। अधिगम-अनुभवों को इस तरह से नियोजित किया जाए ताकि उनके माध्यम से इन कौशलों का विकास हो सके। इस प्रकार का नियोजन भी विद्यालयों में प्रचलित श्रेणी-स्तरों के अनुसार ही होना चाहिए।

iii) जिम्मेदारीपूर्ण सामूहिक सहभागिता से संबंधित कौशल

ये कौशल तथा अध्ययन करने, सीखने, जिज्ञासा करने और निर्णय करने वाले कौशल परस्पर जुड़े हुए हैं। समूहगत समस्या-समाधान में योग्यतापूर्ण सहभागिता के लिए आवश्यक है कि छात्र अनेक प्रकार की जानकारी और सोचने से संबंधित कौशलों का उपयोग करता रहे। ऐसा करने के लिए सामूहिक सहभागिता संबंधी कौशल विकसित किए जाने चाहिए। जैसे, सामूहिक चर्चा या क्रियाओं संबंधी कार्यक्रमों को नियमानुसार, सहकारिता के आधार पर और प्रभावी तौर पर संचालित करने के लिए आवश्यक नेतृत्व करने, कार्यक्रम आयोजित करने, विचारों का आदान-प्रदान करने और समझौते का रास्ता अपनाने के लिए, संबंधित कौशलों का विकास करना होगा। इनमें छोटे-छोटे समूहों में समस्या-समाधान, भूमिका-निर्वाह और नागरिक कार्यनिष्ठा परियोजनाओं से संबंधित अधिगम अनुभवों को भी सम्मिलित किया जा सकता है।

अध्यापकों को चाहिए कि वे छात्रों के सामने ऐसा अनुपोषक अभिगम-पर्यावरण स्थापित करें जो छात्रों को समूहिक क्रियाओं में भाग लेने और उसमें अपना योगदान करने के लिए प्रोत्साहित कर सके तथा उन्हें सबके प्रयत्नों और योगदान को समझने और उनका आदर करना सिखा सकें। जहाँ तक संभव हो, अध्यापकों को यह भी ध्यान रखना होगा कि कोई भी छात्र समूह-परियोजनाओं से अलग न रहने पाए।

क्रियाकलाप

नक्शे में दी गई सूचनाओं को आधार बनाकर उनकी सही व्याख्या करने के बारे में एक नमूने की अध्यापन क्रिया बनाइए।

नगरीय यातायात सुधार कार्यक्रम से संबंधित एक समूह-परियोजना तैयार कीजिए।

1.4.2 सामाजिक अध्ययन के अध्यापन के लिए आवश्यक दृष्टिकोण और दक्षता विकास में अध्यापक की भूमिका

सामाजिक अध्ययन के एक समेकित विषय के रूप में अध्यापन और अभिगम से हमारी जो अपेक्षाएँ हैं उनका तथा जो व्यक्ति इस विषय से संबंधित विषय-वस्तु को छात्रों तक पहुँचाता है उसका - अर्थात् दोनों का ही समान महत्व है। सामाजिक अध्ययन के अध्यापक को एक साथ कई भूमिकाओं का निर्वाह करना पड़ता है। उदाहरण के लिए, वह छात्रों में व्यक्तित्व के मूल्यों को विकसित करता है, उनकी अभिवृत्तियों को ढालने में मदद करता है तथा लोकतंत्र में साथ-साथ रहने से संबंधित नागरिक की जिम्मेदारियों को वहन करना सिखाता है। विशेष कर, मतदान की आयु घटाकर 18 वर्ष कर दिए जाने से विद्यालयों की जिम्मेदारी अब और अधिक बढ़ गई है। वह इस तरह से कि उन्हें अब सामाजिक अध्ययन विषय के माध्यम से छात्रों में तर्कबुद्धि सम्मत निर्णय-क्षमता भी विकसित करनी होगी। अतः अब अध्यापक को संज्ञानात्मक, भाव प्रधान, तकनीकी, व्यावसायिक और मानवीय क्षमताओं से पूरी तरह तैयार हो जाना चाहिए।

एलिस (1977) ने सामाजिक अध्ययन के अध्यापक की निम्नलिखित दो मुख्य भूमिकाएँ बताई हैं। वह :

i) सूचनाओं का समुचित प्रसारण करता है, तथा

i) अधिगम-प्रक्रिया को सुगम बनाता है।

दूसरे शब्दों में, अध्यापक को छात्रों के सामाजिक चरित्र को विकसित करने के लिए तथा विद्यालय को सामाजिक पुनर्निर्माण का केंद्र बनाने के लिए समुचित परिस्थितियों के साथ अध्यापन-सामग्री का समेकन करने वाले की भूमिका निभानी पड़ती है। इसके लिए आवश्यक है कि उसमें नवीनतम ज्ञान प्राप्ति की निरंतर दिलचस्पी बनी रहे तथा वह स्वयं निरंतर अध्येता बने रहते हुए अपनी जानकारी और कौशलों में अद्यतन तथ्यों का समावेश करता रहे।

अध्यापक को विवेच्य विषय की सम्यकरूपेण जानकारी हो - ऐसी आशा करना आवश्यकता से अधिक नहीं माना जाएगा। इसके लिए उसे तथ्यों का संग्रह करते समय किन्हें ग्रहण करने तथा किन्हें छोड़ने के बारे में तुरंत निर्णय करने के साथ-साथ जिज्ञासापूर्ण अभिवृत्ति का धनी होना चाहिए संगृहीत सूचनाओं का छात्रों में प्रसारण करते समय उसे व्यक्तिगत पक्षपात और पूर्वाग्रहों से ऊपर उठना पड़ेगा। अध्यापक की क्षमता और सामर्थ्य से संबंधित नीचे दी जा रही दो सूचियों की तुलना करना रुचिकर होगा :

i) एडवर्ड पेसन स्मिथ ने सौ से अधिक कक्षा-परिस्थितियों का परीक्षण करने के बाद सामाजिक अध्ययन के अध्यापक के जो गुण गिनाए हैं (याज्ञिक 1966 द्वारा उद्धृत), उन्हें नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है :

- निष्पक्षता
- सहानुभूति
- संस्कृति
- कुतूहल/जिज्ञासा
- निर्णायक मन
- नाटकीय मूल प्रवृत्ति
- संतुलन
- जीवंत व्यक्तित्व का धनी
- विश्वास प्रेरण की योग्यता

- आदर्शों के प्रति निष्ठा का भाव

ii) भारतीय विद्वानों के अनुसार सामाजिक अध्ययन के अध्यापक में निम्नलिखित अनिवार्य गुण होने चाहिए :

- विद्वता
- व्यावसायिक प्रशिक्षण
- व्यक्तित्व
- अध्यापन-कौशल
- मानवीय संबंध

सामाजिक अध्ययन विषय के प्रभावी अध्यापक के गुणों की इस सूची को देखकर यह लगता है कि अध्यापक, उसके (पूर्व) प्रशिक्षण और सेवाकालीन प्रशिक्षण को अनिवार्य घटक मानते हुए इस बात पर बल दिया गया है कि अध्यापक के व्यक्तिगत गुणों के साथ-साथ दोनों प्रकार के प्रशिक्षणों के दौरान अर्जित गुण भी इसमें सम्मिलित किए जाने चाहिए। अध्यापक को अच्छा ज्ञाता होना चाहिए, साथ ही उसके लिए यह भी जरूरी है कि संज्ञानात्मक कौशलों के माध्यम से वह अपनी प्रवीणता को लगातार बढ़ाता रहे। इन गुणों के अतिरिक्त उसमें विषय-सामग्री के प्रतिपादन में सहायक भावपरक कौशल और प्रकार्यात्मक कौशल भी होने चाहिए। उसकी प्रतिपादन शैली का सही उपागम-प्रणाली और तकनीकों से समन्वित होना आवश्यक है। इस प्रणाली और तकनीकों में कई प्रक्रम सम्मिलित हैं। जैसे, जिज्ञासा प्रकट करना या पूछताछ करना, प्रश्न पूछना, उदाहरण या दृष्टांत देकर समझाना, वर्णन करना, चित्रण करना, व्याख्या करना, संग्रह करना, प्रदर्शित करना, विचार-विमर्श करना, मूल्यांकन करना, विश्लेषण करना, संचालन करना, निर्णय करना आदि-आदि। ऐसा करते समय उसे अपने नेतृत्व-गुण का प्रदर्शन करना चाहिए। कक्षा के अंदर और बाहर - दोनों ही जगह वांछित अधिगम-वातावरण बना रहे तथा वह विकसित भी होता रहे - ऐसा उसे प्रयत्न करते रहना चाहिए। इसके लिए छात्रों को भी प्रोत्साहित किया जाना आवश्यक है। उपयुक्त विद्यालयी और सामुदायिक संसाधनों का भरपूर उपयोग करते हुए उसे अपने अध्यापन-कार्य को संगठित, नियोजित और कार्यान्वित करने का प्रयत्न करना चाहिए। ऐसा करते समय वह सामूहिक क्रिया-कलाप की विधि अपनाए, व्यक्ति केंद्रित जिम्मेदारियाँ सुनिश्चित करे तथा अध्येता या सीखने वाले के ज्ञान, समझ, कौशलों और अभिवृत्तियों में हुए विकास को जाँचने के लिए उनके मूल्यांकन की व्यापक विधि तैयार करे।

सामाजिक अध्ययन विषय को क्यों पढ़ाया जाए? आइए, अब हम इस विषय को समझने का प्रयत्न करें।

इस प्रश्न के कई उत्तर हो सकते हैं। अलग-अलग व्यक्ति अपनी-अपनी समझ के अनुसार समाजीय, राष्ट्रीय और पाठ्यचर्या संबंधी पूर्वापेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए इस प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न करते हैं। मोटे तौर पर, सामाजिक अध्ययन के लक्ष्यों की तीन कोटियाँ बनाई जा सकती हैं। ये हैं :

i) सामाजिक अध्ययन का विषय पढ़कर छात्र अपनी निजी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते हैं,

ii) छात्रों को शैक्षिक, सामाजिक और वैज्ञानिक ज्ञान अर्जित करने की आवश्यकता होती है, तथा

iii) समाज को ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता होती है जो नागरिक के रूप में अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों की जानकारी रखते हों।

अधिकतर लोकतांत्रिक देशों में लोगों को नागरिकता की शिक्षा सामाजिक अध्ययन के माध्यम से ही मिलती है। इस प्रसंग में अन्य विषयों की अपेक्षा सामाजिक अध्ययन का योगदान

सर्वाधिक माना जाना चाहिए। वह इस तरह से कि इसके अध्ययन से सामान्यतः छात्रों का व्यक्तिगत विकास सबसे अधिक होता है, उन्हें मानवीय संबंधों की जानकारी मिलती है तथा स्वतंत्रता को पुष्ट करने वाले सिद्धांतों और व्यवहारों के प्रति उनकी निष्ठा बलवती होती है। इस सामान्य विचार को खास तौर से रेखांकित करना चाहें तो कहेंगे कि सामाजिक अध्ययन से :

i) छात्रों के मानवीय संबंध दृढ़ होते हैं,

ii) वे भौतिक जगत् का सही उपयोग करना सीखते हैं,

iii) वे राजनीतिक और नागरिक जिम्मेदारियाँ सँभालना सीखते हैं,

iv) आर्थिक क्षमताओं का निर्वाह करना जान जाते हैं, तथा

v) समृद्ध और संपन्न जीवनयापन करने की क्षमता विकसित कर लेते हैं।

शिक्षा आयोग (1964-66) के अनुसार "सामाजिक अध्ययन का विषय पढ़ाने का लक्ष्य छात्रों को अपने पर्यावरण की जानकारी देना, मानवीय संबंधों को समझना और अपने समुदाय, राज्य, राष्ट्र यहाँ तक कि सारी दुनिया के मामलों में बुद्धि-कौशलपूर्ण भागीदारी के लिए महत्वपूर्ण मानी जाने वाली कुछ अभिवृत्तियाँ और मूल्यों को विकसित करना माना गया है। भारत में अच्छी नागरिकता और भावात्मक एकता विकसित करने के लिए सामाजिक अध्ययन संबंधी एक प्रभावी पाठ्यचर्या तैयार करना आवश्यक है।"

बोध प्रश्न

टिप्पणीयाँ : (क) नीचे दिए गए खाली स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

3. सामाजिक अध्ययन पाठ्यचर्या की कोई दो सीमाएँ/ कमियाँ बताइए।

....

....

....

....

4. सामाजिक अध्ययन में जिज्ञासा, पूछताछ करने और निर्णय लेने से संबंधित कौन-कौन से कौशल अपनाए जाने चाहिए?

....

....

....

....

5. सामाजिक अध्ययन पढ़ाने वाले अध्यापक के कोई पाँच गुण बताइए।

....

....

....

....

....

1.5 हम सामाजिक अध्ययन को एक संपूर्ण विषय के रूप में क्यों पढ़ाएँ?

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एन पी ई) 1986 के लागू हो जाने पर राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन सी ई आर टी) ने देश के जाने-माने विद्वानों के परामर्श से सामाजिक अध्ययन के जो व्यापक उद्देश्य निर्धारित किए, वे नीचे दिए जा रहे हैं :

1.5.1 नीतिगत ढाँचा

बच्चे को इस स्तर पर, भारत के अतीत से संबंधित सभी सामाजिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक विकास आदि के मुख्य-मुख्य पक्षों का अध्ययन आरंभ करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में, यहाँ तक कि विश्व में जीवनयापन संबंधी जो विभिन्नताएँ पाई जाती हैं और ये सभी क्षेत्र किस तरह से एक-दूसरे पर निर्भर हैं, उन्हें जानने-समझने में भी उसकी मदद की जानी चाहिए। उसे नागरिक और राजनीतिक संस्थाओं की जानकारी मिलनी चाहिए तथा समसामयिक सामाजिक और आर्थिक मामलों एवं उनसे संबंधित समस्याओं को समझना चाहिए। सामाजिक कौशलों और नागरिक क्षमताओं की जानकारी हो जाने पर तथा राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य विकसित हो जाने पर वह सामाजिक और आर्थिक पुनर्रचना के कार्य में अपनी भागीदारी निभा सकेगा।

इन उद्देश्यों/ प्रयोजनों को प्राप्त करने के लिए जो निदेश और प्रत्याशाएँ/ अपेक्षाएँ राष्ट्र के सामने प्रस्तुत की गई हैं, उन्हें सामाजिक अध्ययन के द्वारा प्राप्त करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य ही माना जाएगा।

1.5.2 सामाजिक अध्ययन के अध्यापन से संबंधित उभरते उद्देश्य

यदि सामाजिक अध्ययन लोगों और उनके बीच चलने वाली अंतःक्रिया तथा लोगों और उनके पर्यावरण के बीच चलने वाली अंतःक्रिया - दोनों का ही अध्ययन है तो फिर इस विषय के कुछ सामान्य उद्देश्य इस प्रकार निर्धारित किए जा सकते हैं :

i) सामाजिक अध्ययन का विषय पढ़ाने का लक्ष्य है - सीखने वालों के मन में अपने बारे में अधिक-से-अधिक जागरूकता या समझ पैदा करना, उनके मूल्यों को स्पष्ट करना और उनकी जाँच करना तथा उनमें आत्म-बोध की भावना स्थापित करना।

ii) सामाजिक अध्ययन का विषय पढ़ाने से सीखने वालों के मन में अपने से भिन्न मूल्यों में विश्वास करने वालों और भिन्न प्रकार का जीवन जीने वालों को समझने और उन्हें अपने बीच अंगीकार करने की भावना फैलाने में मदद मिलती है।

iii) सामाजिक अध्ययन के अध्यापन से अध्येताओं को देश-विदेश की प्राचीन घटनाओं को समझने में सहायता मिलती है तथा ऐसे विशिष्ट व्यक्तियों के जीवन ओर कार्यों का परिचय मिलता है जिन्होंने आधुनिक जीवन को सँवारने में और भावी परिवर्तनों की कल्पना करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

iv) सामाजिक अध्ययन का अध्यापन अध्येताओं को अर्थशास्त्र, शासन और संस्कृति जैसी मानवीय व्यवस्थाओं का ज्ञान प्राप्त कराने में सहायता करता है।

v) सामाजिक अध्ययन का अध्यापन अध्येताओं में समस्याओं के बारे में स्वतंत्र रूप से छानबीन करने और अन्य लोगों द्वारा प्रस्तुत समाधानों का बारीकी से विश्लेषण कर उनके बारे में अपनी राय प्रकट करने में मदद करता है।

vi) सामाजिक अध्ययन के शिक्षण का लक्ष्य है - भविष्य का निर्माण करने में सहायक संभावित स्थितियों और उनकी संभावित भूमिकाओं के बारे में अध्येताओं को जागरूक करना।

vii) सामाजिक अध्ययन के शिक्षण से सीखने वालों को सर्जनात्मक अभिव्यक्ति और समस्या-समाधान के माध्यम से मानवीय स्थितियों को सुधारने में लोगों के प्रयत्नों की जानकारी प्राप्त करने और उनकी उपयोगिता को समझने में मदद मिलती है।

viii) सामाजिक अध्ययन के पढ़ाए जाने से सीखन वालों को लोगों की अंतःक्रियाओं से संबंधित विभिन्न निर्णयकारी प्रक्रमों को समझने में मदद मिलती है तथा उन्हें प्रभावी निर्णयकर्त्ता बनने के लिए आवश्यक कौशलों की प्राप्ति भी हो जाती है।

ix) सामाजिक अध्ययन का शिक्षण अध्येताओं को लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सहकारी और प्रतियोगिता मूलक-दोनों प्रकार की परिस्थितियों का उपयोग करने/ सामना करने की योग्यता प्रदान करता है।

x) सामाजिक अध्ययन के शिक्षण से अध्येताओं के मन में अपने और अपने साथियों के संभाव्य सामर्थ्य के प्रति संवेदनशीलता की भावना जागृत हो जाती है।

यों तो सामाजिक अध्ययन के शिक्षण के अन्य कई विस्तृत लक्ष्य गिनाए जा सकते हैं; किंतु इस विषय की शिक्षा देने का वास्तविक महत्व इस बात से आँका जाना चाहिए कि ये लक्ष्य या प्रयोजन दैनंदिन जीवन में खरे उतरते हैं या नहीं। इसलिए यह आवश्यक है कि दिन-प्रतिदिन की पाठ्यचर्या वाले अल्पकालिक विशेष लक्ष्य निर्धारित किए जाते रहें ताकि इन लक्ष्यों को सुगमतापूर्वक प्राप्त किया जा सके।

पाठ्यचर्या के इस चरण को प्रायः लक्ष्यों का विनिर्देशन कहा जाता है। इसे आप लक्ष्यों का विशिष्टीकरण भी कह सकते हैं। विनिर्दिष्ट या विशिष्ट लक्ष्यों के विकास का पहला चरण है - सामान्य उद्देश्य बताना तथा इसकी अवधारणा स्पष्ट करना। इसके बाद छात्रों से पूछा जाना चाहिए कि वे उल्लिखित/ विनिर्दिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति कर हमारे सामने कौन से उदाहरण प्रस्तुत करना चाहेंगे। छात्रों से इस प्रश्न के स्पष्ट उत्तर माँगे जाएँ। ये लक्ष्य संज्ञानात्मक, भावोन्मुख या कौशलोन्मुख हो सकते हैं तथा इनका संबंध अध्येता या शिक्षार्थी के बौद्धिक विकास, भावनात्मक विकास, संवेदनशीलता, अभिवृत्तियों और कौशलों से होना चाहिए।

शैक्षिक लक्ष्यों का निरूपण कुछ निर्देशक सिद्धांतों पर आधारित है। ये सिद्धांत हैं :

i) लक्ष्य में (1) वांछित व्यवहारमूलक परिणाम का प्रकार और (2) विषय-वस्तु सम्मिलित होने चाहिए। पहले को कभी-कभी क्षमता या ऐसा संशोधन कहा जाता है जो अधिगम के परिणामस्वरूप सीखने वाले के व्यवहार में आए परिवर्तन का सूचक हो, जब कि विषयवस्तु से अभिप्राय है उस साधन का, जिसके बल पर वांछित व्यवहार प्राप्त किया जाता है।

ii) लक्ष्य को छात्र के व्यवहार के रूप में ग्रहण और व्यक्त किया जाना आवश्यक है।

iii) लक्ष्यों का उल्लेख सरल और स्पष्ट शब्दों में किया जाए। उनमें अस्पष्टता या जटिलता नहीं होनी चाहिए।

iv) लक्ष्यों का कथन भ्रमोत्पादन, पुनरावृत्ति और वचन व्याघात अर्थात् परस्पर विरोधी कथन जैसे दोषों से मुक्त हो।

v) उद्देश्यों को इस तरीके से प्रस्तुत किया जाए कि उनमें संवृद्धि प्रक्रम की निरंतरता के विकास की संभावना बनी रहे, अर्थात् कोई कथन अंतिम निष्कर्ष जैसा न लगे।

vi) लक्ष्य सामाजिक स्वीकार्यता की कसौटी पर खरे उतरने वाले हों।

vii) लक्ष्य यथार्थवादी हों तथा निर्धारित समय-सीमा में उपलब्ध संसाधनों के द्वारा प्राप्त किए जा सकें।

viii) लक्ष्य पर्याप्त रूप से व्यापकता लिए हों ताकि उनमें वांछित परिणाम वाले तीनों मुख्य कार्यक्षेत्र - संज्ञानात्मक, भावोन्मुख और मनश्चालक - समाविष्ट हो जाएँ।

उदाहरण

लक्ष्य : सामाजिक अध्ययन से संबंधित तथ्यों, संकल्पनाओं, सिद्धांतों और उनके सामान्यीकरण को जानना। लक्ष्य का विनिर्देशन : इस लक्ष्य की उपलब्धि प्रदर्शित कर छात्र-

1.1 तथ्यों, संकल्पनाओं, सिद्धांतों आदि का पुनर्कथन कर सकेगा;

1.2 तथ्यों, संकल्पनाओं, सिद्धांतों आदि को पहचान सकेगा;

1.3 विभिन्न पाठ-स्रोतों, नक्शों, चार्टों, आरेख, तस्वीरों आदि से दी गई सूचना को ग्रहण कर सकेगा।

क्रियाकलाप

अब आप निम्नलिखित उद्देश्य को विशिष्ट उद्देश्यों में परिवर्तित कीजिए।

अर्जित ज्ञान और समझ को नई परिस्थितियों में लागू करना

1. ....

2. ....

3. ....

4. ....

5. ....

इसी तरह आप अपनी मन-मर्जी से कुछ अन्य उद्देश्यों को चुनकर उनके विशिष्ट उद्देश्य बताने का प्रयत्न करें।

इस स्थिति तक पहुँच कर आप इनके बारे में भलीभाँति जान सकेंगे :

- सामाजिक अध्ययन के स्वरूप के बारे में,
- वांछित अधिगम-परिणामों के बारे में,
- सामाजिक अध्ययन की पाठ्यचर्या के बारे में,
- सामाजिक अध्ययन के अध्यापक की भूमिका के बारे में, तथा
- इस विषय को विद्यालय में पढ़ाने की आवश्यकता क्यों हैं - इन सबके बारे में पूरी तरह से जान चुके हैं।

उल्लिखित उद्देश्यों/ लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सामाजिक अध्ययन की विषय-वस्तु को किस तरह से संयोजित या व्यवस्थित किया जाए, हो सकता है, इस बारे में भी आपको आगे सोचना-समझना पड़े।

बोध प्रश्न

टिप्पणियाँ : (क) नीचे दिए गए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

6. सामाजिक अध्ययन विषय के अध्यापन के कोई तीन उद्देश्य बताइए।

....

....

....

....

1.6 सामाजिक अध्ययन पाठ्यचर्या को व्यवस्थित करने संबंधी विभिन्न उपागम

सामाजिक अध्ययन पाठ्यचर्या को व्यवस्थित करने के कई तरीकों और उपागमों का कई विद्वानों द्वारा पूर्व-परीक्षण किया जा चुका है। प्रत्येक उपागम के अपने-अपने गुण-दोष स्वतः स्पष्ट हैं। अध्यापक की यह जिम्मेदारी है कि वह अध्येता छात्रों की आवश्यकताओं, उनके आयु-स्तर एवं समाजीय और राष्ट्रीय/ अंतरराष्ट्रीय माँगों/ ज़रूरतों को ध्यान में रखते हुए सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों की प्राप्ति/ उपलब्धि सुनिश्चित करे। उसकी पाठ्यचर्या को किसी एक बँधे-बँधाए खाँचे में जोर-जबरदस्ती से ढालने का परिणाम यह होगा कि पूर्वनिर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति का संतुलन बिगड़ जाएगा। अगले परिच्छेद में सामाजिक पाठ्यचर्या के व्यवस्थापन से संबंधित विभिन्न उपागमों/ विधियों का स्पष्ट परिचय दिया जा रहा है। ऐसा करते समय यह भी बताया जाएगा कि वैकल्पिक उपागमों को अपनाने के नियंत्रणकारी कारक कौन-कौन से हैं।

1.6.1 एकीकृत/ समाकलित उपागम

आइए, अब हम विषय-वस्तु व्यवस्थापन के ऐसे दो उदाहरणों का परीक्षण करें जिनके प्रयोजन समान हैं। मान लीजिए, अध्यापक छात्रों को युद्ध की विभीषिका से परिचित कराना चाहता है। ऐसा करने का उद्देश्य यह हो सकता है कि वह छात्रों को अंतरराष्ट्रीय संघर्षों को शांत करने के लिए उपलब्ध विकल्पों के बारे में बताना चाहे। ऐसी स्थिति में :

i) इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वह विश्व इतिहास के पाठ्यक्रम को चुनेगा। प्रथम विश्वयुद्ध का अध्ययन करने से छात्र यह जान पाएँगे कि उस युद्ध में कितना व्यय हुआ था, युद्ध की स्थिति कैसे टाली जा सकती थी, युद्ध के बाद समझौता कैसे हुआ तथा जो समझौता हुआ, क्या उसमें ही द्वितीय विश्वयुद्ध के बीज निहित थे?

   इस प्रसंग में अध्यापक ने यद्यपि एक युद्ध विशेष को अध्यापन के विषय के रूप में चुना है, किंतु उसका वास्तविक उद्देश्य यह है कि इस युद्ध को आधार बनाकर वह सामान्य रूप से सभी युद्धों की त्रासदी को छात्रों के सामने रखना चाहता है। इसमें यह उद्देश्य भी निहित है कि जहाँ तक हो सके, युद्ध नहीं होने देने चाहिए।

ii) हो सकता है, इसी उद्देश्य को लेकर कोई अन्य अध्यापक दो-तीन सप्ताह का अध्यापन-कार्यक्रम निम्नलिखित प्रश्नों को आधार बनाकर आयोजित करे :

   "क्या तृतीय विश्वयुद्ध को शुरू होने से रोका जा सकता है?"

   अध्ययन के दौरान छात्र वर्ग जिन विवेच्य विषयों पर विचार-विमर्श करेंगे - वे कुछ इस तरह के हो सकते हैं : बीसवीं सदी में हुए युद्धों, युद्ध-निवारण और परमाणु-अस्त्रों के प्रसार पर रोक का मनोविज्ञान, शस्त्रीकरण का अर्थशास्त्र तथा विचारधारा और व्यापार प्रतियोगिताजन्य अंतरराष्ट्रीय संघर्ष आदि-आदि। इस अध्ययन के दौरान छात्र सदा अनेक विद्याशाखाओं से अर्जित ज्ञान का उपयोग करते जाएँगे।

विचार करें तो हमें ज्ञात होगा कि पहले उदाहरण वाला अध्यापक सामाजिक अध्ययन को एक शास्त्रीय विषय के रूप में पढ़ा रहा है जबकि दूसरा अध्यापक उसी सामाजिक अध्ययन को एकीकृत विषय मानकर आगे बढ़ रहा है। सामाजिक अध्ययन को पढ़ाते समय एकीकृत उपागम का अनुसरण किया जाए - इसके पक्ष में तीन स्पष्टीकरण दिए जा सकते हैं :

i) मनोविज्ञान की दृष्टि से यह एकीकृत उपागम सही साबित होता है।

ii) दार्शनिक दृष्टि से भी इसे ठीक माना जा सकता है।

iii) एकीकृत उपागम वैज्ञानिक अध्ययन की परिवर्तनशील प्रकृति के अनुकूल है। इसे अपना कर सामाजिक अध्ययन की पाठ्यचर्या में सम्मिलित विषयों को छात्रों के मानसिक विकास की विभिन्न अवस्थाओं के अनुरूप ढाला जा सकता है। दूसरी बात यह है कि इस उपागम के माध्यम से व्यक्तिगत उद्देश्यों में संख्या वृद्धि और सामाजिक उद्देश्यों में प्रसार-वृद्धि - दोनों पर ही ध्यान संकेंद्रित करने की संभावना अधिक जान पड़ती है। तीसरी बात यह है कि अब वैज्ञानिक ज्ञान इतना अधिक बढ़ चुका है कि परंपरागत शास्त्रीय विद्याशाखाओं और नई विद्याशाखाओं के बीच की बहुत-सारी सीमा-रेखाएँ मिट चुकी हैं और निरंतर मिटती जा रहीं हैं। उदाहरण के लिए, पहले मनोविज्ञान, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, इतिहास, भूगोल, आदि विषयों को अलग-अलग विद्याशाखाएँ माना जाता था, जबकि अब राजनीतिक व्यवहार, आर्थिक इतिहास और सांस्कृतिक भूगोल जैसे नए-नए विषय पढ़ाए जाने लगे हैं। यही नहीं, अब जनसंख्या अध्ययन, पर्यावरण अध्ययन, वैश्विक अध्ययन जैसे नए-नए अध्ययन-क्षेत्र विकसित हो चुके हैं, जिनकी विषय-वस्तु विभिन्न परंपरागत विद्याशाखाओं से गृहीत है। इस तरह से, एकीकृत उपागम के पक्ष में और कई तर्क दिए जा सकते हैं और इसे ही अपनाने का औचित्य सिद्ध किया जा सकता है।

सामाजिक अध्ययन की विषयवस्तु में कई विद्याशाखाओं के तत्वों को एकीकृत/ समाकलित करने के कई तरीके हो सकते हैं, किंतु जो तीन महत्वपूर्ण विकल्प नज़र आते हैं, वे इस प्रकार हैं :

i) विद्याशाखाओं की पहचान बनाए रखते हुए एकीकरण करना,

ii) सामाजिक विज्ञानों की संकल्पनाओं और सामान्यीकरणों/ सामान्यीकृत सिद्धांतों के माध्यम से एकीकरण करना, तथा

iii) एकीकरण द्वारा समाकलन।

एकीकृत विधि से किया गया विषयवस्तु का व्यवस्थापन भी कई तरीकों से हो सकता है। ये तरीके हैं :

i) **वर्ण्य-विषय :** अध्यापक के लिए सरल, सुगम और सहज रास्ता तो यह होगा कि वह अपनी अध्यापन-प्रक्रिया को वर्ण्य-विषय पर केंद्रित करे। अभिप्राय यह है कि संदर्भित सूचनाएँ तो भले ही विभिन्न शास्त्रीय विद्याशाखाओं से गृहीत हों किंतु ध्यान का केंद्र बिंदु (फोकस) सदैव वर्ण्य विषय पर ही रहे, न कि उन विद्याशाखाओं पर जिनसे वे सूचनाएँ प्राप्त की गई हैं।

ii) **मूलभूत प्रश्न :** मूलभूत प्रश्न ही वह आधार है जिस पर सामाजिक अध्ययन की पाठ्यचर्या का निर्मित भवन टिका हुआ है। सन् 1976 में, ह्यूटन मिफिन (Houghton Miffin) पब्लिशिंग कंपनी ने किंडरगार्टन स्तर (ग्रेड) से लेकर स्तर-6 (5 से 12 वर्ष तक की आयु वाले बच्चों के लिए) तक के लिए सामाजिक अध्ययन की जो संपूर्ण पाठमाला तैयार की वह जिस मूलभूत प्रश्न पर आधारित थी, वह प्रश्न है - "मैं कौन हूँ?" इस पाठमाला के लेखकों ने जो इकाइयाँ और पाठ तैयार किए, वे सब मानवीय अस्मिता/ पहचान के इन चार आयामों में वृद्धि के सूचक हैं - छात्र के सामने इस प्रकार की सूचनाएँ प्रस्तुत की जाएँ कि उसे अपने-आप को व्यक्ति के रूप में, वर्ग के सदस्य के रूप में, मानव के रूप में और इस भूमंडल/ पृथ्वी के वासी के रूप में ठीक-ठीक समझने में मदद मिल सके। संपूर्ण पाठमाला की विषय-वस्तु विभिन्न सामाजिक विज्ञानों, प्राकृतिक विज्ञानों और मानविकी जैसी विद्याशाखाओं से गृहीत परिप्रेक्ष्यों, विचारों और कार्यविधियों से निर्मित है। इन सबका ऐसा मिश्रण तैयार किया गया है कि तत्वों की अलग-अलग पहचान नहीं की जा सकती। संपूर्ण पाठमाला का केंद्र-बिंदु एक ही मूलभूत प्रश्न है - "मैं कौन हूँ?" अतः

कहा जा सकता है कि मूलभूत प्रश्न वे हैं जो देश-काल की सीमा में नहीं बाँधे जा सकते। जो प्रश्न सारे संसार में सदा से पूछे जाते रहे हैं और पूछे जाते रहेंगे, अर्थात् जो जिज्ञासाएँ कालातीत और स्थानातीत हैं - वे ही मूलभूत प्रश्न हैं। ये प्रश्न हैं : मैं कौन हूँ? मैं यहाँ क्यों हूँ? लोगों में भेदभाव क्यों पाया जाता है? देश आपस में युद्ध क्यों करते हैं? कुछ लोग दूसरे लोगों से तरह-तरह के भेदभाव क्यों बरतते हैं? आदि-आदि।

iii) समस्याएँ : समस्याओं को आधार बनाकर भी विषय-वस्तु का व्यवस्थापन किया जा सकता है। जो इस उपागम को अपनाते हैं उनका विश्वास है कि सामाजिक अध्ययन के मुख्य उद्देश्यों में से एक उददेश्य छात्रों को अपने समय की सामाजिक समस्याओं को समझने में मदद करना है। इन समस्याओं पर अपना ध्यान केंद्रित कर छात्रों को चाहिए कि वे कई विद्याशाखाओं से संबंधित संकल्पनाओं, विचारों और परिप्रेक्ष्यों को ग्रहण करें। सामाजिक अध्ययन की पाठ्यचर्या बनाते समय उसमें अन्य विद्याशाखाओं से जो सामाजिक समस्याएँ ग्रहण की जाती रही हैं, उनके उदाहरण हैं - परमाणु युद्ध का खतरा, जनसंख्या-विस्फोट, विश्वव्यापी भूख, मानव अधिकारों का उल्लंघन, पर्यावरणीय प्रदूषण आदि-आदि। सार रूप में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक अध्ययन के लिए एकीकृत उपागम को अपना लेने पर एकल विषय आधारित अध्यापन पद्धति की तुलना में अध्यापकों को अधिक परिश्रम करना होगा तथा अन्य विद्याशाखाओं से संबंधित सामग्री का चयन करने में अपेक्षाकृत अधिक सावधानी बरतनी होगी। किंतु ऐसा करना उनके लिए कहीं अधिक विचारोत्तेजक और उत्साहवर्धक अनुभव सिद्ध होगा। सामाजिक अध्ययन के प्रसंग में अध्यापन का एकीकृत उपागम अपनाने के बारे में अध्यापकों को प्रोत्साहित और प्रेरित करते समय एक गंभीर रुकावट यह आती है कि अधिकांश अध्यापकों को उनके सेवापूर्व प्रशिक्षण के दौरान इस पद्धति से पढ़ाने का प्रशिक्षण नहीं दिया गया था; उन्हें तो केवल सभी विषयों को अलग-अलग पढ़ाने का तरीका ही समझाया गया था। परिणामतः पूरी तरह से तैयार न होने के कारण वे इस नए एकीकृत उपागम को अपनाने में या तो आना-कानी करते देखे गए हैं या संकोच प्रकट करते। यहाँ तक कि कुछ अध्यापक तो यह मान बैठे हैं कि इन अलग-अलग विषयों के बारे में एकीकरण की कल्पना करना ही भ्रामक है। इस स्थिति के बावजूद, अर्थात् इस प्रकार की कमियों के बावजूद अब सारे संसार में सामाजिक अध्ययन को एकीकृत विषय के रूप में पढ़ाने में लगातार वृद्धि हो रही है।

1.6.2 अंतःशास्त्रीय/ सहसंबंधित उपागम

सामाजिक अध्ययन के दो चरम परिप्रेक्ष्यों के बीच, अर्थात् जिसके एक छोर पर अलग-अलग विषय हों और दूसरे छोर पर उन सभी विषयों को एकीकृत माना जाता हो, कुछ अन्य विचार भी उपलब्ध हैं, जिनमें से एक अंतःशास्त्रीय उपागम वाला विचार है तो दूसरा बहुशास्त्रीय उपागम वाला विचार। जैसा कि इनके नामकरण से ही स्पष्ट है, ये दोनों उपागम किसी एक विषय से बँधे हुए नहीं रहते। अंतःशास्त्रीय उपागम दो या दो से अधिक विषय-क्षेत्रों को जोड़ता है। उदाहरण के लिए, राजनीतिशास्त्र और अर्थशास्त्र को जोड़कर एक नया विषय बनता है - वह है राजनीतिक अर्थशास्त्र। इस नए विषय में दो भिन्न-भिन्न विद्याशाखाओं के मुख्य हिस्से मिलकर एक हो जाते हैं। "बहुशास्त्रीय उपागम" जैसे समस्त शब्द का उपयोग प्रायः यह बताने के लिए होता है कि कई विद्याशाखाओं की संकल्पनाओं, जिज्ञासा-प्रणालियों अर्थात् जाँच-पड़ताल की विधियों और उनके संकल्पनात्मक विन्यास से लाभ उठाने का प्रयत्न किया जा रहा है। पाठ्यक्रम-निर्माता अपने कार्य के दौरान, उन्हें जिस तरह से उपयोगी समझता है, मिलाता जाता है। दोनों उपागमों में से कौन-सा उपागम अपनाया जा रहा है, तथा उसकी स्थिति क्या है - यह इस बात पर निर्भर करता है कि उसका उपयोग किस तरह से किया गया है। जब कभी आप देखें कि सामाजिक अध्ययन का विषय इतिहास, भूगोल आदि-आदि भिन्न-भिन्न खंडों में पढ़ाया जा रहा हो तो यह मान लेना गलत होगा कि इतिहास और भूगोल जैसे पाठ्यक्रम अन्य विषयों के प्रभाव से अछूते हैं। अलग-अलग कक्षाओं में अलग-अलग विषय पढ़ाते वक्त अध्यापकगण अपने विषय में बहुशास्त्रीय सूचनाएँ और दृष्टिकोण पेश कर सकते हैं और प्रायः देखा गया है कि वे ऐसा करते भी हैं। यद्यपि अभी इस एकीकृत उपागम के उपयोग की प्रथा बहुप्रचलित नहीं हुई है, फिर भी पाठ्यचर्या-नियोजक अब इस ओर ध्यान देने लगे हैं। उदाहरणार्थ,

हमारे स्वतंत्रता आंदोलन की बात करते समय यदि हम भारतीय लोकतंत्र (स्वतंत्रता) की बात करते हैं तो ऐसा करना इतिहास और नागरिकशास्त्र के बीच सहसंबंध स्थापित करना होगा।

1.6.3 इकाई उपागम

इकाई का सीधा-सा अर्थ है - किसी अवधि विशेष के सहसंबंधित अनुभवों का समूह। यह अवधि बहुत छोटी होनी चाहिए ताकि छात्र जो - कुछ सूचनाएँ प्राप्त करें उन्हें स्मरण रख सकें, उनके परस्पर संबंधों को जान सकें, महसूस कर सकें तथा विभिन्न सूचना खंडों को समग्र रूप में ग्रहण कर सकें।

यद्यपि कोई भी इकाई संपूर्ण कार्यक्रम का एक हिस्सा मात्र होती है किंतु अन्य हिस्सों की तुलना में उसकी पहचान अलग से की जा सकती है। इकाई योजना में सामान्य रूप से जो बातें सम्मिलित की जाती हैं, वे हैं - लक्ष्यों का संदर्भ, उद्देश्य विषयक कथ्यसामग्री, कार्यप्रणाली, संसाधन और मूल्यांकन योजना।

1.7 वैकल्पिक उपागमों को प्रभावित करने वाले कारक

सामाजिक अध्ययन पाठ्यचर्या का व्यवस्थापन किसी एक नियत उपागम का अनुसरण करके नहीं किया जाता। अतः यहाँ भी किसी बन-बनाए रास्ते पर चलने की सलाह नहीं दी जा रही है। जिस किसी भी उपागम को अपनाया जाए वह सदा समाज विशेष और राष्ट्र विशेष की आवश्यकताओं तथा अध्यापकों के सामर्थ्य के अनुकूल होना चाहिए।

वैकल्पिक उपागमों के चयन को प्रभावित करने वाले कुछ कारक आगे बताए जा रहे हैं।

1.7.1 लचीलापन

सामाजिक अध्ययन का पाठ्यविवरण लचीला हो ताकि उसमें छात्रों के अनुभवों के लिए स्थान रहे तथा परिस्थिति की आवश्यकताओं के अनुसार अध्यापक को पाठ्यचर्या विषयक अनुभवों के नियोजन में अपेक्षित स्वतंत्रता मिल सके।

1.7.2 संसाधनों की उपलब्धता

संसाधनों की उपलब्धता भी स्थानीय परिस्थितियों और विशिष्ट स्थितियों पर आधारित होती है। जो सुसंगत संसाधन विद्यालयों में और उनके आस-पास उपलब्ध हों उनका उपयोग करते हुए सामाजिक अध्ययन के विषय को पढ़ाया जा सकता है। अध्यापक को चाहिए कि वह पाठ्यचर्या विषयक प्रक्रमों की रूपरेखा तैयार करते समय उपलब्ध संसाधनों के बारे में छात्रों के बीच जागरूकता विकसित करे।

1.7.3 सामुदायिक संसाधनों का उपयोग

संसाधनों को कई कोटियों में वर्गीकृत किया जाता है। यथा, विद्यालयी संसाधन, सामुदायिक संसाधन आदि। कुछ समुदाय संसाधनों के मामले में अत्यत समृद्ध हो सकते हैं और ऐसी स्थिति में उन सभी संसाधनों का उपयोग सामाजिक अध्ययन का अध्यापन करते समय किया जाना चाहिए। ये संसाधन हैं : तारामंडल, चिड़ियाघर, संग्रहालय, नदियाँ, स्मारक आदि। इन सभी उपलब्ध संसाधनों का लाभप्रद तरीके से उपयोग किया जा सकता है।

1.7.4 निजी अनुभवों का उपयोग

अध्ययन-अध्यापन संबंधी प्रक्रम-व्यवस्थापन में अध्यापक के लिए बहुत जरूरी है कि अध्येता छात्रों और अध्यापकों के निजी अनुभवों पर भी ध्यान दे तथा उन्हें यथासंभव पाठ्य सामग्री का अंग बना ले। ऐसा करने से छात्रों के मन में संकल्पनाएँ स्पष्ट हो जाएँगी और वे उन्हें ठीक तरह से समझ भी सकेंगे।

1.7.5 विद्यार्थियों के अभिलक्षण

स्तर, आयु, अनुभव, उद्भासन (एक्सपोज़र), ग्रामीण या शहरी वातावरण, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि आदि में अंतर होने की वजह से अध्येता छात्रों को भी अलग-अलग समूहों में बाँटा जाता है। इन सभी प्रकार के समूहों के लिए पाठ्य- सामग्री की योजना बनाते समय अध्यापक को अध्येता छात्रों के अभिलक्षणों के प्रति संवेदनशील रखना होगा। इसका कारण यह है कि एक विशेष समूह की आवश्यकताएँ अन्य सामान्य समूहों की आवश्यकताओं से भिन्न हो सकती हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणियाँ: (क) नीचे दिए गए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

7. सामाजिक अध्ययन का अध्यापन करते समय एकीकृत उपागम अपनाने के क्या लाभ हैं?

....

....

....

....

....

8. सामाजिक अध्ययन पाठ्यचर्या के व्यवस्थापन में वैकल्पिक उपागमों को प्रभावित करने वाले कारकों का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

....

1.8 सारांश

इस इकाई में हमने सामाजिक अध्ययन के अर्थ और स्वरूप पर विचार किया है। ऐसा करते समय हमारा इस बात पर विशेष बल रहा है कि इस अध्ययन का केंद्र मनुष्य और उसका पर्यावरण है। यद्यपि भारत संघ के अधिकतर राज्यों में "सामाजिक अध्ययन" शब्द अपना लिया गया है, फिर भी देखा यह गया है कि इस विषय से संबंधित सभी पाठ्य पुस्तकों में तथा मूल्यांकन-प्रक्रिया अपनाते समय इस विषय के अंतर्गत इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र और अर्थशास्त्र विषयक सामग्री को अलग-अलग शीर्षकों में विभाजित कर उसका प्रतिपादन करने की प्रथा प्रचलित है। वांछित अधिगम परिणामों को लक्ष्य बनाकर छात्रों के दृष्टिकोण में विकास करना और उनकी क्षमताओं में वृद्धि करना सामाजिक अध्ययन के अध्यापक की भूमिका का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग है।

नीतिगत ढाँचे/ व्यवस्था में सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों और उनकी प्राप्ति के मार्ग का स्पष्ट उल्लेख किया गया है। फिर भी यह बात अध्यापक के जिम्मे छोड़ दी गई है कि वह इन उद्देश्यों और परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखते हुए सामाजिक अध्ययन पाठ्यचर्या की क्या योजना बनाता है और उसका व्यवस्थापन कैसे करता है - एकीकृत उपागम को अपनाकर या अंतःशास्त्रीय उपागम के रूप में या इकाई-वार। इन उपागमों में से किसी भी उपयुक्त उपागम का अनुसरण करते समय अध्यापक को अतिरिक्त संवेदनशील रहना होगा ताकि वह जिस उपागम को चुने वह छात्र, समाज और राष्ट्र की आवश्यकताओं के अनुरूप तो हो ही, साथ ही स्थानीय परिस्थितियों और उपलब्ध संसाधनों से मेल भी खाए।

1.9 अभ्यास कार्य

1. सामाजिक अध्ययन की संकल्पना स्पष्ट कीजिए। भारतीय पृष्ठभूमि में आप किस संकल्पना को सर्वाधिक उपयुक्त संकल्पना मानते हैं?
2. सामाजिक अध्ययन संबंधी विभिन्न विचारों में से किन्हीं तीन विचारों का उल्लेख कीजिए।
3. सामाजिक अध्ययन को विद्यालय स्तर पर क्यों पढ़ाया जाना चाहिए?
4. सामाजिक अध्ययन पढ़ाने के सामान्य उद्देश्य बताइए।
5. सामाजिक अध्ययन पढ़ाने के वांछित परिणामों की सूची बनाइए।
6. सामाजिक अध्ययन पढ़ाने के सामान्य उद्देश्यों और विशिष्ट उद्देश्यों का सोदाहरण अंतर स्पष्ट कीजिए।
7. मूल पाठ्यचर्या के रूप में सामाजिक अध्ययन का महत्व प्रतिपादित कीजिए।
8. आपके राज्य में सामाजिक अध्ययन विषयक जो पाठ्यचर्या प्रचलित हो, उसके गुण-दोषों का सूक्ष्म विवेचन कीजिए।
9. सामाजिक अध्ययन विषयक पाठ्यचर्या के व्यवस्थापन से संबंधित विभिन्न उपागमों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
10. सामाजिक अध्ययन के अध्यापक की भूमिका का विवेचन कीजिए।

1.10 चर्चा के बिंदु

1. "सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों में परिवर्तन करना आवश्यक है" - विवेचन कीजिए।
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति - 1986 में सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम और उसकी विषयवस्तु के व्यवस्थापन के बारे में जो कुछ कहा गया है उसका निहितार्थ क्या है - इसका विश्लेषण कीजिए।
3. "अध्यापक तब तक सामाजिक अध्ययन का अध्यापन करने के योग्य नहीं माना जाता, जब तक वह स्वयं निरंतर सीखता न रहे।" इस कथन की विवेचना कीजिए।
4. "सामाजिक अध्ययन के अंतर्गत मनुष्य की उस प्रगति का अध्ययन किया जाता है जिसे उसने अपने पर्यावरण और अन्य पर्यावरणों के साथ हुई उसकी अंतःक्रिया के माध्यम से अर्जित किया हो।" इस कथन का विवेचन कीजिए।
5. सामाजिक विज्ञानों की संकल्पनाओं और सामान्यीकरण के माध्यम से एकीकरण संभव है या अलग-अलग विषयों की पहचान बनाए रखते हुए ही इसे प्राप्त किया जा सकता है? इस कथन की विवेचना कीजिए।

6. सामाजिक अध्ययन में किस उपागम को अपनाया जाए : वर्ण्य विषयपरक, विषयपरक या इकाईपरक? युक्तियुक्त पूर्ण विवेचन कीजिए।

1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. एक अध्ययन-क्षेत्र के रूप में सामाजिक अध्ययन लोगों के सहसंबंधों का अध्ययन है।

2. सामाजिक अध्ययन के तीन मुख्य प्रयोजन हैं :

   i) व्यक्तिगत आवश्यकताओं को पूरा करना,

   ii) शास्त्रीय, सामाजिक और वैज्ञानिक ज्ञान अर्जित करना, और

   iii) समाजीय आवश्यकताओं के अनुरूप नागरिकता की शिक्षा देना।

3. i) सामाजिक अध्ययन संबंधी पाठ्यचर्या में आलोचनात्मक और विश्लेषणात्मक चिंतन की अपेक्षा सूचना-अर्जन/संप्राप्ति पर अधिक बल दिया जाता है।

   ii) मानव और उसके पर्यावरण से सरोकार रखने वाली विद्याशाखाओं/विषयों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व सामाजिक अध्ययन की (वर्तमान) पाठ्यचर्या में नहीं मिलता।

4. सामाजिक अध्ययन में जिज्ञासा और निर्णयन संबंधी वांछित कौशल निम्नलिखित हैं:

   i) किसी समस्या को पहचानने का कौशल

   ii) प्राक्कल्पनाएँ विकसित करने का कौशल

   iii) अन्वेषण का कौशल

   iv) प्राक्कल्पनाओं के वैधीकरण का कौशल

   v) निष्कर्ष निकालने का कौशल

5. i) विद्वत्ता

   ii) व्यावसायिक प्रशिक्षण

   iii) व्यक्तित्व

   iv) अध्यापन कौशल

   v) मानवीय संबंध

6. i) अपने से भिन्न मूल्यों में विश्वास रखने वाले और भिन्न जीवन-शैली अपनाने वाले लोगों के बारे में अध्येता के मन में समझ पैदा करना और उन्हें उसी रूप में स्वीकार करने की भावना विकसित करना।

   ii) अर्थशास्त्र, शासन और संस्कृति के क्षेत्रों में मान्य मानव-व्यवस्था के बारे में अध्येता को जानकारी देना।

   iii) भूतकाल की घटनाओं और व्यक्तियों के बारे में तथा वर्तमान जीवन को ढालने में उनकी भूमिका के बारे में अध्येता को जानकारी देना।

7. i) मनोविज्ञान की दृष्टि से सही है।

   ii) दार्शनिक दृष्टि से सही है।

   iii) वैज्ञानिक अध्ययन की परिवर्तनशील प्रकृति के अनुकूल रुख अपनाना है।

8. i) लचीलापन

   ii) संसाधनों की उपलब्धता

   iii) सामुदायिक संसाधनों का उपयोग

   iv) निजी अनुभवों का उपयोग, तथा

   v) अध्येताओं के अभिलक्षण

1.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Bhattacharya, S. and Darji, D. R. (1966) : *Teaching of Social Studies in Indian Schools*, Acharya Book Depot, Baroda.

Ellis, A.K. (1977) : *Teaching and Learning Elementary Social Studies*, Allyn and Bacon Inc., London.

Jarolimek, J. and Walsh, H. M. (1969) : *Readings for Social Studies in Elementary Education*, 2nd Ed., Collier-MacMillan Ltd., London.

Michaelis, J. V. (1963) : *Social Studies for Children in a Democracy, Recent Trends and Developments,* 3rd Ed., Prentice Hall Inc., Englewood Cliffs.

Meh Linger, H. D. (1981) : *UNESCO Handbook for the Teaching of Social Studies*, Croom Helm., London.

Servey, R.E. (1981) : *Elementary Social Studies : Skill Emphasis*, Allyn and Bacon Inc., London.

Yajnik, K.S. (1966) : *Teaching Social Studies in India,* Orient Longmans Ltd., Bombay.